Chapter 3

तृतीय अध्याय

हिन्दी-गुजराती दलित कहानी का प्रारंभ और विकासयात्रा

(क) हिन्दी कहानी

- प्रस्तावना
- प्राचीन और आधुनिक कहानी
- कहानी की परिभाषा
- कहानी और उपन्यास में अंतर
- कहानियों का वर्गीकरण
- कहानी के तत्व
- कहानी का उद्भव एवं विकास

(अ) हिन्दी पूर्व कहानी परंपरा

(आ) हिन्दी में कहानी का विकास

(1) भारतेन्दुयुग

(2) द्विवेदीयुग

(3) प्रेमचंदयुग

(4) आधुनिकयुग

- नयी कहानी
- अकहानी
- समांतर कहानी
- सचेतन कहानी
- जनवादी कहानी
- सक्रिय कहानी
- लघु कहानी या लघुकथा

(ख) हिन्दी दलित कहानी का प्रारंभ एवं विकासयात्रा

(ग) गुजराती कहानी

- प्रस्तावना
- परिभाषा
- गुजराती कहानी के विभिन्न रूप
- नयीवार्ता
- लघुकथा
- अ-वार्ता
- छोटी कहानी (टूंकी वार्ता)

(घ) गुजराती दलित कहानी का प्रारंभ एवं विकासयात्रा

(क) हिन्दी कहानी

प्रस्तावना :

साहित्य विधा में कहानी का अपना एक महत्वपूर्ण स्थान है । कहानी का सामान्य अर्थ 'कहना' होता है; किंतु आज हिन्दी साहित्य में यह शब्द विधा विशेष के लिए रूढ़ हो गया है । अत: यहाँ पर कहानी का विवेचन उसे साहित्य की एक विधा के रूप में ही मानकर किया जायेगा ।

दुनिया की सभी भाषाओं के साहित्य का सबसे प्राचीन रूप उसके काव्य और उसकी कहानियों में मिलता है । ऋग्वेद भारत का प्राचीनतम साहित्य है जिसमें एक ओर काव्य मिलता है तो दूसरी ओर कहानियों का प्रारंभिक रूप भी मिलता है । दृष्टांतों के सहारे अपनी बात कहने की प्रथा भारत में बड़ी प्राचीन है । हमारा संपूर्ण पौराणिक साहित्य इस प्रकार के दृष्टांतों से भरा हुआ है ।

हाँ; समय-समय पर कहानी का स्वरूप और उसकी मान्यताएँ अवश्य बदलती रही हैं । जैसे आज हिन्दी साहित्य में हम जिन कहानियों को पढ़ते हैं वे प्राचीन कहानियों से भिन्न नज़र आती है ।

प्राचीन और आधुनिक कहानी :

प्राचीन कहानियों में समय या लम्बाई का कोई बंधन नहीं था । बच्चों को जो कहानियाँ सुनाई जाती थी, वे कई-कई दिन तक चलती थी । उस समय की कहानी ओर लोककथा करीब-करीब एक जैसी ही हुआ करती थी ।

आज समय का महत्व बढ़ गया है । व्यस्त जीवन में हमारे पास इतना समय नहीं कि लम्बी-लम्बी कहानियों को सुनते रहे । इसलिए आज यह आवश्यक हो गया है कि कम से कम समय में कहानी समाप्त हो जाय कहानी कला की दृष्टि से भी ऐसी कहानियाँ आदर्श मानी गई हैं ।

प्राचीन कहानियों में विचित्र घटनाएँ और चमत्कारपूर्ण वर्णन किया जाता था । इनमें स्वाभिवकता और वास्तविकता का कम ध्यान रखा जाता था, परंतु आज की कहानी में यथार्थ और स्वाभाविकता का बड़ा ध्यान रखा जाता

है । वही कहानी अधिक सफल मानी जाती है जो सत्यता लिए हुए हो और जिसमें हमारे दैनिक जीवन तथा परिस्थितियों की चर्चा हो ।

प्राचीन कहानी का प्रधान उद्देश्य था मनोरंजन था । इसीलिए उसमें घटनाओं का चमत्कार अधिक था और कहानी कुतूहल-वर्धक होती थी। लेकिन आज यह आवश्यक समझा जाता है कि कहानी में कोई भी बात अविश्वसनीय न हो ।

प्राचीन कहानी का स्वरूप कहानी कहनेवाले की इच्छा के अनुसार बदलता था और उसमें कहानी-कला की मर्यादाओं का ध्यान कम रखा जाता था । आज की कहानी के लिए कुछ निर्देशक तत्त्व स्वीकार किए गए हैं जिनका पालन किये बिना वह सफल कहानी नहीं मानी जाती ।

प्राचीन कहानी देव-देवताओं, राक्षसों, प्रेतों, परियों, जादूगरों, राजा और पशु-पंछी की कहानी हुआ करती थी । आज की कहानी मनुष्य जीवन की कहानी है । वह समाज का चित्र प्रस्तुत करती है । प्राचीन कहानी केवल भावना के सहारे उड़ती थी और तीन लोक चौदह भुवनों में हर जगह चक्कर लगाती थी । आज की कहानी को तर्क और ज्ञान की कसौटी पर भी कसा जाता है ।

प्राचीन कहानी में चरित्रों का चित्रण स्वाभाविक नहीं होता था । उनमें अतिशयोक्ति होती थी । आज कहानी में यह ध्यान रखा जाता है कि मनुष्य में अच्छाईयाँ भी होती हैं और बुराईयाँ भी, इसीलिए मनुष्यों के गुणों के साथ उसकी कमजोरियों का भी वर्णन किया जाता है ।

कला की दृष्टि से आज की कहानी बहुत आगे बढ़ चुकी है । आज वह केवल मनोरंजन की वस्तु न होकर समाज की सच्ची तस्वीर प्रस्तुत करती है और साहित्य के क्षेत्र में सम्मानित है । शैली की दृष्टि से आज की कहानी का ढाँचा ही बदल चुका है । तब कहानी को देखने का नज़रिया भी बदलना होगा ।

कहानी :

कहानी की परिभाषा :

कहानी विश्व की सर्वाधिक प्राचीन वस्तु है । इसलिए कोई आश्चर्य

नहीं कि उसका आरंभ उसी समय हुआ होगा जब मनुष्य ने घुटनों के बल चलना सीखा हो ।

रिचर्ड बर्टन

कहानी को रसोद्रेक करनेवाला एक ऐसा आख्यान माना है, जो एक ही बैठक में पढ़ा जा सके ।

एडगर एलन पो

कहानी तो बस वही है जो लगभग बीस मिनट में साहस और कल्पना के साथ पढी जाय ।

एच. जी. बेल्स

ऐसा कहना वैसा ही होगा जैसा चोपाया होने की समानता के आधार पर "मेंढक को एक छोटा बैल और बैल को एक बड़ा मेढ़क कहना।" वास्तव में उपन्यास तथा कहानी के बीच आकार-प्रकार के भेद के साथ ही साथ वस्तु, शिल्प और शैली में भी पर्याप्त अंतर होता है ।

बाबू गुलाबराय

आख्यायिक एक निश्चित लक्ष्य या प्रभाव को रख लिया गया नाटकीय आख्यान है ।

बाबू श्यामसुंदरदास

कहानी एक ऐसी रचना है जिसमें जीवन के किसी अंग या किसी एक मनोभाव को प्रदर्शित करना ही लेखक का उद्देश्य होता है ।

प्रेमचंद

कहानी जीवन की प्रतिच्छाया और जीवन स्वयं एक अधूरी कहानी है। एक शिक्षा है, जो उम्र भर मिलती है और समाप्त नहीं होती ।

श्री अज्ञेय

कहानी और उपन्यास में अंतर :

कुछ विद्वान कहानी को कटा-छटा उपन्यास और उपन्यास को विचारपूर्वक कहीं गई कहानी मानने की भूल कर बैठे हैं । डॉ. भगीरथ मिश्र ने कहानी और उपन्यास की समानता और अंतर बताते हुए अपने 'काव्यशास्त्र' में निम्न विशेषताओं की चर्चा की हैं -

कहानी	उपन्यास
(1) कहानी जीवन की एक झलक मात्र प्रस्तुत करती है ।	उपन्यास संपूर्ण जीवन का विस्तृत चित्र उपस्थित करता है ।
(2) कहानीकार संकेतों के सहारे अपनी बात कहता है ।	उपन्यासकार पूरी व्याख्या करता है और बात को विस्तार के साथ समझता है ।
(3) कहानी एक विशेष भाव या समस्या का चित्रण है ।	उपन्यास पूरी परिस्थितियों का वर्णन करते हुए जीवन की पूरी कहानी कहता है ।
(4) कहानी अपने छोटे रूप में होती है । उसमें दूसरी छोटी मोटी कहानियों का समावेश नहीं होता ।	उपन्यास में प्रमुख कहानी के अलावा कई छोटी-मोटी कहानियों और दृष्टांतो की भी गुंजाइश रहती है ।
(5) कहानी में समय कम रहता है और उसे विस्तार भी कम दिया जाता है ।	उपन्यास में विस्तार अधिक होता है । वहाँ केवल संकेतों से बात नहीं समझाई जाती ।

कहानी और उपन्यास में कुछ साम्यताएँ भी है । जैसे -

(1) दोनों का ही लक्ष्य मानव जीवन पर प्रकाश डालना है ।

(2) दोनों ही मनोरंजन का लक्ष्य लेकर चलते है ।

(3) दोनों के तत्त्व समान हैं । कथावस्तु, चरित्र-चित्रण, कथोपकथन, देशकाल, उद्देश्य और शैली ये तत्व थोड़े-बहुत अंतर के साथ दोनों में पाये जाते हैं ।

(4) दोनों की रचना गद्य में होती है ।

कहानियों का वर्गीकरण :

विभिन्न आधार मानकर कहानी के विभिन्न भेद किये गए हैं । विषयवस्तु के आधार पर कहानियों को आठ वर्गो में विभक्त किया गया है ।

(1) चरित्र-प्रधान :

जिस कहानी में चरित्र-चित्रण को प्रधानता दी जाती है । इनमें घटना या कथा बहुत कम रहती है ।

(2) कार्य-प्रधान :

इसमें कार्य पर सबसे अधिक बल दिया जाता है । जासूसी कहानियाँ कार्य प्रधान कहानियाँ ही है । इनमें चरित्र-चित्रण को महत्व नहीं दिया जाता ।

(3) घटना-प्रधान :

इनमें घटनाओं के घात-प्रतिघात पर जोर दिया जाता है । इनमें कला और चरित्र सौंदर्य कम पाया जाता है ।

(4) वर्णन-प्रधान :

इनमें वातावरण पर अधिक ध्यान दिया जाता है । कलाकार अपनी इच्छानुसार वातावरण की सृष्टि करता है ।

(5) प्रभाव-प्रधान :

जिनका उद्देश्य किसी प्रभाव विशेष की सृष्टि करना होता है । इनमें कलात्मकता को अधिक महत्व दिया जाता है । हिन्दी में ऐसी कहानियाँ अभी बहुत कम है ।

(6) हास्य-प्रधान :

जिनमें हास्य के माध्यम से कहानी कही जाती है ।

(7) ऐतिहासिक :

जिनमें इतिहास-प्रधान घटनाओं पर कहानी का आवरण सँवारा जाता है । कहानीकार इतिहास में कल्पना का भी पुट देता है ।

(8) प्राकृतवादी :

इनमें मनुष्य की नफ़रत और शर्म की बातें कलात्मक ढंग से कह दी जाती हैं ।

रचना लक्ष्य के आधार पर कहानी के तीन वर्ग स्थिर किये गए हैं - (1) आदर्शवादी (2) यथार्थवादी (3) आदर्शोन्मुख यथार्थवादी ।

प्रतिपादन शैली के आधार पर कहानियों के पाँच प्रमुख वर्ग बनाये गए हैं । (1) उत्तम पुरूष प्रधान (2) अन्य पुरुष-प्रधान (3) पत्र पद्धति में लिखित (4) वार्तालाप पद्धति में लिखित और (5) डायरी पद्धति में लिखित ।

विषय के आधार पर कहानियों को कुछ अन्य प्रमुख वर्गो में भी रखा गया हैं; जैसे धार्मिक कहानियाँ, राजनीतिक कहानियाँ, ऐतिहासिक कहानियाँ, वैज्ञानिक कहानियाँ, सामाजिक कहानियाँ आदि ।

रचना लक्ष्य के आधार पर कहानी के तीन वर्ग स्थिर किए गए हैं - (1) आदर्शवादी (2) यथार्थवादी (3) आदर्शोन्मुख ।

स्वरुप-विकास के आधार पर कहानियों के चार भेद स्वीकार किये गये हैं । (1) निर्माण-कालीन (2) प्रयोग-कालीन (3) विकास-कालीन (4) समुन्नति कालीन ।

कहानी के तत्त्व :

सामान्यतः उपन्यास तथा कहानी के जो छः तत्त्व स्वीकार किये गये हैं, वे हैं -

(1) कथावस्तु (2) पात्र (चरित्र-चित्रण) (3) संवाद (4) वातावरण (5) भाषाशैली (6) उद्देश्य ।

कुछ विद्वानों ने 'भाव' नामक सातवें तत्त्व को भी स्वीकार किया है । वस्तुतः इस तत्त्व को अलग नहीं माना जाना चाहिए । यह तो एक ऐसा तत्त्व है जो उपर्युक्त सभी तत्त्वों में अनुस्यूत रहता है । इसके प्रभाव में शेष छः तत्त्व नीरस और निर्जीव हो जायेगें । अतः इसकी अवस्थिति उन सभी में है, अलग से यह कोई तत्त्व नहीं ।

कहानी का उद्‌भव एवं विकास :

(अ) हिन्दी-पूर्व कहानी परंपरा

(आ)हिन्दी में कहानी का विकास

(1) भारतेन्दुयुग
(2) द्विवेदीयुग
(3) प्रेमचंदयुग
(4) आधुनिकयुग

(अ) हिन्दी पूर्व कहानी परंपरा :

रचनाकाल की दृष्टि से भारतीय कथा साहित्य अत्यंत प्राचीन है । उसका विस्तार वैदिक संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश आदि भाषाओं में मिलता है । वैदिक साहित्य में आर्यो और दस्यूओं तथा 'उर्वशी-पुरुरवा' जैसे उपाख्यान मिलते है । कहानी का पुराना रूप आख्यायिकाओं, आख्यानकों, जातक कथाओं, पौराणिक कथाओं, दंत कथाओं, लोक-कथाओं आदि के रूपों में मिलता है । "पंचतंत्र, हितोपदेशी गुणाठय की बृहत्कथा, कथा सरित्सागर, वैताल-पंचविशतिका, सिंहासन द्वात्रिंशिका, शुक-सप्तांति आदि ग्रंथों का संस्कृत के कहानी साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान है ।

संस्कृत की कहानियों का संबंध मुख्यत: पशु-पक्षियों तथा अलौकिक चरित्रों से रहा है । पशु-पक्षियों की कथाओं द्वारा सुकुमार-मति बालकों को व्यावहारिक जीवन संबंधी शिक्षा देना तथा कल्पना-जगत से संबंध रखनेवाले, यक्ष, गंधर्व, अप्सराओं और बैताल आदि की कथाओं द्वारा पाठकों का मनोरंजन करना संस्कृत की कहानियों का मुख्य उद्देश्य सिद्ध होता है । इन कहानियों को आधुनिक हिन्दी कहानी का मूलाधार नहीं माना जा सकता ।

वस्तुतः प्राचीन कहानी में अलौकिकता, अस्वाभाविकता, आदर्शवादीता एवं काल्पनिकता का आग्रह अधिक था, जबकी आधुनिक कहानी में लौकिकता, स्वाभाविकता, यथार्थवादिता एवं विचारात्मकता पर अधिक बल दिया जाता है । प्राचीन कहानी स्वर्ग-लोक की कल्पना थी जबकि आधुनिक कहानी हमें धरती के सुख-दुःख का स्मरण कराती है ।

(आ) हिन्दी में कहानी का विकास :

हिन्दी में कहानियों का आरंभ प्रायः गोकुलनाथ द्वारा रचित "चौरासी वैष्णवों की वार्ता" तथा "दो सो बावन वैष्णवों की वार्ता" से माना जाता है । अठारवीं शताब्दी के आरंभ में मुंशी सदासुखलाल ने 'सुखसागर' लल्लूलाल ने 'प्रेमसागर' तथा सरल मिश्र ने 'नासिकेतोपाख्यान' की रचना की। किंतु इन सभी कथाओं में मौलिकता का नितांत अभाव है । इंशाअल्लाखाँ की 'रानी केतकी' की कहानी को भी हिन्दी की सर्वप्रथम मौलिक कहानी माना है । हिन्दी में कहानी का वास्तविक आगमन भारतेन्दू बाबू से माना जाता है ।

(1) भारतेन्दु युग :

भारतेन्दुयुग में सर्वप्रथम भारतेन्दुबाबू हरिशचंद्र ने 'एक अद्‌भूत अपूर्व स्वप्न' नामक कहानी की रचना की । यद्यपि यह कहानी कहानीकला की दृष्टि से बहुत उत्कृष्ट कोटी की नहीं कही जा सकती तथापि इसमें कहानी जैसी रोचकता मिलती है । 'हमीरहठ', 'राजासिंह', 'महालय', 'सोलवती', 'सुलोचना' आदि इनके और कई आख्यान मिलते हैं परंतु उनमें भी कहानी के सब तत्व विद्यमान नहीं है । पं. गौरीदत्त शर्मा इस युग के एक अन्य प्रसिद्ध कहानीकार है जिन्होंने 'कहानी टका, कमानी', 'देवरानी-जिठानी की कहानी' जैसी कहानियाँ लिखीं । इनकी कहानियों में उपदेशात्मकता तथा रोचकता है ।

(2) द्विवेदी युग :

'सरस्वती' पत्रिका के संपादन से आधुनिक ढंग की कहानियों को

जन्म मिला । इसमें सर्वप्रथम किशोरीलाल गोस्वामीजी की 'इन्दुमती' कहानी 1900 ई. में प्रकाशित हुई । इस कहानी पर शेक्सपियर के नाटक 'टेम्पेस्ट' की स्पष्ट छाप है । बाबू गिरिजाकुमार घोष, मास्टर भगवानदास, रामचंद्र शुक्ल, गिरिजादत वाजपेयी, आदि लेखकों ने अपनी कहानियाँ 'सरस्वती' में प्रकाशित की ।

(3) प्रेमचंद :

हिन्दी कहानियों के विकास के इतिहास में प्रेमचंद का आर्विभाव एक महत्वपूर्ण घटना है । अत्यंत उत्कृष्ट कोटि के कहानीकार जयशंकर प्रसाद भी इसी युग में आते है । प्रेमचंद और प्रसाद ने लगभग साथ ही साथ कहानी लिखना प्रारंभ किया । बल्कि कहना चाहिए कि हिन्दी कहानी क्षेत्र में प्रसाद सन् 1915 में आए, लेकिन प्रसाद की पहली कहानी 'ग्राम' इन्दु में छपी थी तो प्रेमचंद की पहली कहानी हिन्दी में 'पंच परमेश्वर' 1916 में छपी और आखरी कहानी 1936 में 'कफ़न' छपी । उन्होंने 1911 में उर्दू कहानियाँ लिखीं थी ।

इस प्रकार हिन्दी कहानी जगत् में प्रसाद भले ही प्रेमचंद से कुछ ही समय पूर्व अवतरित हुए; किंतु इस क्षेत्र में पहले आने का श्रेय उन्हें ही है ।

(4) आधुनिक युग :

प्रेमचंद जी के बाद हिन्दी कहानी साहित्य के क्षेत्र में अनेक नव्य प्रवर्तन देखने को मिलते है । पाश्चात्य साहित्य के अधिक सम्पर्क विश्व में होनेवाले परिवर्तनों एवं चेतना के नवोदयों ने हिन्दी कहानी को भी यथेष्ट प्रभावित किया । मनोवैज्ञानिक एवं दार्शनिक कहानियों का नव-प्रवर्तन हुआ, उसके प्रथम दर्शन हमें जैनेन्द्र की कहानियों में होते है । घटनाओं से रहित या स्वल्प घटनाओं के आधार पर मानव मन का सूक्ष्म बौद्धिक, दार्शनिक एवं मनोवैज्ञानिक विश्लेषण उनकी कहानियों की प्रमुख विशेषता है । उनकी "पाजेब, वातायन, स्पर्धा, दो चूड़ियाँ, एक रात" आदि उनकी प्रतिनिधि कहानियों के संकलन है ।

इस युग के अन्य कहानीकारों में ज्वालाप्रसाद शर्मा, जनार्दन, प्रसाद भर्ग 'द्विज' चंडी प्रसाद, 'हृदयेश' गोविंद वल्लभ पंत, सियारामशरण गुप्त आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं ।

जैनेन्द्रजी से दार्शनिक एवं मनोविश्लेषणवादी कहानी परंपरा का नव्य

प्रवर्तन हुआ । अनेक कहानीकारों ने इस परंपरा को विकसित करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया उनमें से प्रमुख है - इलाचंद्र जोशी, अज्ञेय, भगवतीप्रसाद वाजपेयी 'अश्क', सुभद्राकुमारी, उषामित्र, चोधरानी, मन्नू भंडारी आदि ।

❑नयी कहानी :

आधुनिक कहानियों की जो चर्चा आगे की गई है, इससे बढ़कर हिन्दी कहानी ने विकास किया है । नया मोड़ लेनेवाली उन नयी कहानी का ही नाम देने के लिए आंदोलन चल रहा है ।

नयी कहानी में दृष्टि और संदर्भ की नवीनता है । नये भाव, शैली टेकनीक, सभी कुछ नया होने के बावजूद नयी कहानी अभी अधिक स्पष्ट स्वरूप नहीं अपना सकी । डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल के अनुसार यह नयी कहानी दु:खी आत्मा की तरह है, इसमें भटकन नहीं करूणा और सहानुभूति है । उसमें विविधता है और इसीलिए विश्वास है कि आगे जाकर इस प्रयोग को सिध्दि अवश्य मिलेगीं । नयी कहानी में कहानी के 'टेकनीक' ने भी विकास किया है । लेकिन वह कई जटिलताओं में उलझ गई है ।

श्री यशपाल भी नयी पीढ़ी के लेखकों को आगे बढ़ा हुआ मानते है और उनसे बड़ी आशाएँ रखते हैं । नये कहानीकारों में डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल, श्रीकांत वर्मा, रामकुमार, कमलेश्वर, शरद जोशी, राजेन्द्र यादव, रमेश बक्षी, राजेन्द्र किशोर, राजकमल चौधरी, प्रभाकर द्विवेदी, हरिशंकर परसाई, हर्षनाथ मार्कण्डेय, फणीश्वरनाथ रेणु, मधुकर गंगाधर, मुद्राराक्षस, धर्मवीर भारती, लक्ष्मीकांत वर्मा आदि के नाम उल्लेखनीय हैं ।

❑अकहानी :

'अकहानी' को पेरिस में जन्मी 'एन्टी स्टोरी' का भारतीय संस्करण माना गया है । विश्वेश्वर ने इसे साठोत्तर कहानी की संज्ञा देते हुए स्वतंत्रता के बाद होश संभालनेवाली पीढ़ी से इसे जोड़ा है । उनके अनुसार इसका जन्म मूलत: रचनात्मक विकृति की पहचान के फलस्वरूप हुआ है । चूँकि एक और रेणु, मार्केण्डेय जैसे कहानीकार थे और यादव, राकेश, कमलेश्वर नयी कहानी में केन्द्र में आकर गंदगी फैला रहे थे, इसलिए युवापीढ़ी ने इन विकृतियों से मुक्त होकर लिखना चाहा । "विश्वेश्वर के शब्दों में - 'साठोत्तर' या 'अकहानी' की आवाज़ पुरानी पड़ती जा रही पीढ़ी के भोगे हुए यथार्थ अनुभव की प्रमाणिकता, प्रतिबद्धता जैसे खोखले नारों के खिलाफ एक सख्त कार्यवाही

थी । इस आवाज़ ने 'नयी कहानी' के झंडाबरदारों को उनके पुराने पड़ जाने का अहसास कराया और उन्हें बिलकुल उसी तरह बौखला दिया, जैसे अपने जमाने में उन्होंने जैनेन्द्र-अज्ञेय आदि को बोखलाया था ।"[1]

अकहानी के तहत जिन कहानीकारों के नाम लिए, उनमें रमेश बक्षी, गंगा प्रसाद विमल, जगदीश चतुर्वेदी, प्रयाग शुक्ल, दूधनाथ सिंह, ज्ञानरंजन, विश्वेश्वर सतीश जमाली आदि उल्लेखनीय हैं ।

❑ सचेतन कहानी :

सचेतन कहानी में जहाँ नयी कहानी के मैनरिज्म का विरोध है वहीं 'कहानी' को मूल्यहीनता और व्यक्तिपरक्ता से मुक्त करने की कोशिश भी है । 'आधार' के 'सचेतन कहानी विशेषांक' में डॉ.महीपसिंह ने सचेतना की व्याख्या करते हुए लिखा कि - यह एक दृष्टि है, जिसमें जीवन जिया जाता है और जाना जाता है । चूँकि मनुष्य की प्रवृति जीवन की ओर भागने की रही है । अत: सचेतनता एक सक्रिय जीवन बोध भी है । सचेतन दृष्टि मनुष्य को सम्पूर्णता में देखना चाहती है । वह जानती है कि मनुष्य के व्यक्तित्व के निर्माण में उसके अचेतन और अवचेतन अस्तित्व से लेकर उसके सचेतन रूप तक अपनी भूमिका निभाते हैं ।

"समाज और व्यक्ति के ऊपरी संबंधों पर जितनी सूक्ष्मता से उसकी दृष्टि जाती है उतनी ही व्यक्ति के आंतरिक संबंधों पर भी । व्यक्ति वहाँ रहता है और आवेगों-संवेगों के साथ व्यवस्थित भावभूमि में रहता हैं, परंतु उसकी कार्यशीलता मात्र अपने व्यक्तिगत स्वार्थ की संकुचित पृष्ठभूमि में नहीं होती ।"[2] सचेतन कहानी 'नयी कहानी' का अंतर्विरोध नहीं है । नयी कहानी की प्रगतिशील और समाज सापेक्ष रचनाधर्मिता का सचेतन कहानी समर्थन करती है । सचेतन कहानी की सामाजिकता की पुर्नप्रतिष्ठा वास्तविक जीवन को उसके सही संदर्भो में देखने का आग्रह तत्कालीन नए कथाकारों की जीवनगत सक्रियता का ही प्रमाण है ।[3] सचेतन कहानीकारों में महीपसिंह, योगेश गुप्त, मनहर चौहान, वेदराही, रामकुमार भ्रमर, कुलभूषण, सुखबीर, सुरेन्द्र अरोड़ा आदि के नाम लिए जाते है ।

सचेतन कहानियाँ घुटी हुई कायर और हतप्रभ मानसिकता की कहानियों के विरोध में लिखी गयी हैं । परिवेश के प्रति संलग्नता इसमें भरपूर बनायी गयी है । सचेतन कहानीकार स्वयं को समाजपरक दृष्टि का लेखक मानते हैं । "अपने परिवेश में जो कुछ भी घटित होता है, उसके वे मार्गदर्शक

या पीड़ित और मज़बूर भोक्ता ही नहीं है, वे उसके सक्रिय सहभागी हैं । वे जीवन को ढोते नहीं, जीते हैं....। सचेतन लेखक अपने सामाजिक परिवेश में सहज और समृद्ध होकर जीते है । चारों और व्याप्त विघटन और मूल्यहीनता को वे अजूबा नहीं मानते हैं कि उसमें बौराकर 'हाय, यह क्या हो गया है ?" की मुद्रा बनाएँ या 'सब कुछ विघटित होकर अब कुछ भी नहीं' बचा है कहकर बस अपने में' सिमट जाएँ । परिवर्तित परिवेश को स्वीकारना और जीना ही सचमुच सक्रिय होकर जीना है ।"[4]

❐समांतर कहानी :

समांतर-1 (1972) के प्रकाशन से समांतर कथाचेतना का प्रारंभ माना जा सकता है । युवा कहानीकारों के एकवर्ग ने 'कमलेश्वर' का साथ देकर इसे पनपने और बढ़ने में सहायता दी । कामतानाथ, से. रा. यात्री, राम अरोड़ा, जितेन्द्र भाटिया, सुधा अरोड़ा, मधुकरसिंह, इब्राहीम शरीफ, दीनेश पालीवाल, हिमांशु जोशी, मिथलेश्वर आदि के अतिरिक्त भीष्म साहनी जैसे वरिष्ठ कहानीकारों का समर्थन इस आंदोलन को मिला । "अधिक्तर प्रबुद्ध पाठक समांतर कहानी को एक ऐसे आंदोलन के रूप में लेते हैं, जो कमलेश्वर द्वारा पुनः सुर्खियों में आने, हिन्दी कहानी के केन्द्र में खुद स्थित होते और कुछ मित्रों-परिचितों को 'जेनुइन' कहानीकार के रूप में स्थापित करने की नीयत से योजनाबद्ध तरीके से शुरु किया गया है ।"[5]

समांतर कहानी के सीधे दो पक्ष है : "एक पक्ष में वह उन सारी शक्तियों के उन्मूलन का स्वरघोष करती है, जिनके कारण आज के आमआदमी ऐसे दमघोटूं वातावरण में रहने को अभिशप्त है, जहाँ उसकी कम से कम आवश्यकताओं की पूर्ति का आधार भी लुप्त हो गया है । दूसरे पक्ष में, वह आमआदमी के संघर्ष की अभिव्यक्ति करते हुए उन सारे कमज़ोर स्थलों को भी बेरहमी से चीर रही है । जिनके कारण आमआदमी के संघर्ष की पकड़ दुर्बल हो रही है ।"[6]

समांतर कहानी साहित्य और जीवन के मूल्यों के बीच की दूरी समाप्त करने के पक्ष में है । साहित्य के मूल्यों और जीवन-मूल्यों में फर्क माननेवाले निहित स्वार्थी लोगों का विद्रोह आक्रमकता, असंतोष, अस्वीकार आदि जैसे साहित्य को साहित्य नहीं मानना चाहते । 'मुक्ति' और 'स्वातंत्र्य' को श्रम, कर्म, संघर्ष की अवधारणाओं से अलग-अलग कर देखने के पक्षपाती है । समांतर लेखन इस वैचारिकता का विरोध करता है । वह कोरी अभिव्यक्ति की

स्वतंत्रता को भी सतही 'कोस्पेट' मानता है । व्यवस्था में आमआदमी की घटती-बढ़ती औकात ही उसकी अभिव्यक्ति की ताकत को तय करती है ।

जनवादी कहानी :

जनवादी कहानी का उदय सातवें दशक के आखिरी वर्षो में माना जाता है । जनवादी कहानी को केवल मजदूरों या किसानों की कहानी कहना भी उचित न होगा । जनवादी कहानी का सर्वाधिक जोर वर्गसंघर्ष के चित्रण पर है । टूटन, थकान, संत्रास की कहानियाँ की प्रतिक्रिया में ये जुझारु किस्म की कहानियाँ है । जनवादी कहानीकारों में नमितसिंह, श्रीहर्ष, प्रदीप मांडव, नीरजसिंह, हेतु भारद्वाज, इसराहल, सूरज पालीवाद आदि के नाम लिए जाते हैं । पिछली पीढ़ी के काशीनाथ सिंह आदि भी इसी मिज़ाज की कहानियाँ लिख रहे है ।

जनवादी कहानी को यह श्रेय दिया जाना चाहिए कि समांतर कहानी की तरह वह भी निम्नवर्ग को केन्द्र में रखने का आग्रह करती है । इस तरह वह एक विशाल जनसमुदाय के हितों से जुड़ जाती है ।

❑ सक्रिय कहानी (नव-निर्माण) :

'सक्रिय कहानी' की अवधारणा सन् 1979 ई. में विशेषज्ञों ने माना है । सक्रिय कहानी का सीधा और स्पष्ट मतलब है आदमी की चेतनात्मक उर्जा और जीवंतता की कहानी । उस समझ और अहसास की कहानी को आदमी की बेबसी वैचारिक निहत्थेपन और नपुंसकता से तिलांजली दिलाकर पहले स्वयं अपने अंदर की कमजोरियों के खिलाफ खड़ा होने के लिए तैयार करने की जिम्मेदारी अपने सिर लेती है । जो साहित्य की इस सार्थकता के प्रति समर्पित है कि साहित्य संकल्प और प्रयत्न के बीच की दरार को कम करने का एक जरियाँ है । सुरेन्द्र सुकुमार के अतिरिक्त रमेश बतरा, चित्रा मुद्गल, विकेश निझावन, सच्चिदानंद धूमकेतु, राकेशवत्स, नवेन्दु आदि सक्रिय कहानीकार भी शोषितजन के साथ गहरें जुड़े होने की गवाही देते है ।

सक्रिय कहानी सक्रिय पात्रों और विचारों की कहानी है, अतः उसमें पुराने मूल्यों को उखाड़ा जा रहा है या 'जेनुइन' मूल्यों की स्थापना के लिए संघर्ष जारी है । व्यर्थ में नैतिकता के सभी प्रतिमानों को ध्वस्त करने में कहानीकार अधिक रूचि नहीं लेते । मुख्यतः सामाजिक-आर्थिक-राजनीतिक विसंगतियों को ध्वस्त करने के इरादे से लिखी गयी ये कहानियाँ भले ही एक 'मैनरिज्म' का शिकार दिखायी देती है, फिर भी आम आदमी के जीवन में

सुगबुगाती विद्रोह चेतना को उभारने में इनकी भूमिका नगण्य नहीं है ।

❒लघुकहानी या लघुकथा :

छोटी कहानी को 'लघुकथा' कहा जाता है जो बेहद लोकप्रिय है । जब 'शोर्ट स्टोरी' के पर्याय के रूप में 'कहानी' की अभिध्त प्रतिष्ठित हो चुकी है, तब कहानी के लघु अथवा लघुत्तम रूप को 'लघु कहानी' कहना अप्रासंगिक न होगा ।

हिन्दी में लघुकथा की शुरुआत को लेकर मतभेद है । कोई माधवराव सप्रे आदि को लघुकथा के लेखक मानते है तो कोई माखनलाल चतुर्वेदी को यह श्रेय देना चाहते है । सच पूछों तो पहली प्रभावशाली लघुकहानी हमारा ध्यान आकर्षित करती है । वह 'जुरमाना' (प्रेमचंद) है । 'जुरमाना' प्रेमचंद की ही नहीं उनके समूचे युग की सबसे छोटी कहानी है । किंतु उसकी संक्षिप्तता में इतना विस्तार है कि वह युग की सीमाओं को अपने भीतर समेट लेती है ।[7]

लघुकथाएँ आज की समस्याओं, मान्यताओं, राजनीतिक और सामाजिक विसंगतियों आदि पर तीखे व्यंग्य प्रहारों के साथ नयी वैचारिकता और नयी मानसिकता की ओर इंगित करती है । साथ ही पाठकों और कथामनीषियों के सामने कुछ प्रश्नचिन्ह भी खड़े करती है - क्या देशव्यापी विषाद से आज का जन सामान्य निजात पा सकेगा ? क्या इन विसंगतियों की कोई सीमा हैं ? सामाजिक न्याय की आड़ में व्यवस्थागत अत्याचारों की यह त्रासदी आदमी को कहाँ पहुँचायेगी ।[8]

जीवनमूल्यों के संक्रमण और बदलाव को लघुकहानी में कहीं सांकेतिक तौर पर तो कभी किंचित विस्तार से कहा गया है । राजनीतिक-सामाजिक विसंगतियों को पहचानने, उनकी तह में पहुँचने और उन पर निर्मम प्रहार करने के साथ-साथ लघु कहानियाँ शोषितजन की पक्षधरता से भी सम्पन्न दिखाई देती हैं । इन कारणों से वे जहाँ एक ओर समकालीन जीवन का दस्तावेज बन गयी है । दूसरी और विसंगतियों और गलत-गलित मूल्यों के प्रति यह आक्रमक और उग्र होने का सबूत देती है ।

(ख) हिन्दी दलित कहानी का प्रारंभ एवं विकासयात्रा :

हिन्दी साहित्य के इतिहास का एक खास और महत्त्वपूर्ण दौर अस्सी-नब्बे के दशक में उभरा एक साहित्यिक आंदोलन है, जिसमें दलित लेखक, कवि आत्म-सजगता के साथ आगे आए और अपने आप को एक अलग साहित्यिक धारा के रूप में उन्होंने अपनी जाति के साथ होनेवाले भेदभाव और

जुल्मों को दिखाया । पहले से हंमेशा साहित्यिक कसोटियों पर कमज़ोर उतरने के बावजूद उन्होंने अपनी रचनाओं में झेली हुई तकलीफों और अपने गुस्से के बेलगाम इजहार पर जोर दिया और इसके महत्व को मनवाने के लिए अपनी पत्रिकाएँ निकाली, सैद्धांतिक आलोचनात्मक लेख लिखें और कई सेमिनार, संमेलन भी किए । यह आंदोलन अभी भी जारी है । मराठी में ऐसे आंदोलन पहले ही साठ-सत्तर के दशक में हो चुका था और वहाँ उनकी फतह भी हुई, लिहाजा जब हिन्दी में उभरा तो लेखकों में हलचल मच गई थी । दलितों के साथ सहानुभूति होने और प्रगतिशील विचारधारा की वजह से कुछ लेखकों ने कहा कि दलित साहित्य हम भी लिखते रहे हैं । हिन्दी में दलित साहित्य की आवाज़ एक आंदोलन के रूप में - पहली बार दलित लेखकों ने ही उठाई, आज भी इसके लिए चल रहे संघर्ष में उन्हीं का हाथ सबसे ज्यादा है और होना भी चाहिए ।

दलित साहित्य का सम्यक अवलोकन करने पर स्पष्ट हो जाता है कि संख्या की दृष्टि से कविताओं का सृजन सबसे अधिक हुआ है । इसके बाद अन्य साहित्य-रूपों की तुलना में दलित कथाओं की संख्या अधिक है । विगत कुछ वर्षो से अनेकानेक युवा दलित साहित्यकार कहानी लेखन की ओर प्रवृत्त हुए है और आज मराठी साहित्य में दलित कहानी को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त हो चुका है ।

जब मराठी साहित्य में दलित लेखन को लेकर सूक्ष्म, विशद, व्यापक और बेहद विचारोत्तेजक बहस चल रही थी उस समय हिन्दी साहित्य में एक दूसरी धारा बह रही थी । मराठी में दलित चेतना आंदोलन जब संघर्ष, शिक्षा, संगठन और साहित्य के बल पर आत्मसम्मान, स्वाभिमान और समाज में आमूल-चूल परिवर्तन की तरफ़ बढ रहा था तथा राजनैतिक भागीदारी के लिए संघर्षरत था तो हिन्दी साहित्य में सामाजि स्तर पर सुधारवादी धारा चल रही थी । साहित्यिक स्तर पर सुधारवादी में दबी-दबी, इक्का-दुक्का, आवाज़े उठती तो थी पर नक्कारख़ाने में तूती की आवाज़ सी गुम हो जाती थी । उत्तर प्रदेश में 19वीं सदीं में ही बाबा साहब से कुछ पहले ही स्वामी अछूतानंद ने ‘आदी हिन्दू आंदोलन’ चलाया जिसके फलस्वरूप जाति पर प्रहार करनेवाला प्रचार और साहित्य लिखा जाने लगा था ।

हिन्दी में दलित चेतना की ठीक-ठीक अभिव्यक्ति करनेवाली रचना सबसे पहले ‘सरस्वती’ पत्रिका में छपी थी, जो सितम्बर 1914 में पटना की

'हीरा डोम' ने वह कविता भोजपुरी में लिखी जो, महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती' में छापी थी । इस प्रकार हिन्दी के दलित साहित्यकारों की कृति को छापने की शुरुआत सरस्वती, 'युद्धरत आम आदमी' और 'हंस' ने की । 'युद्धरत आम आदमी' में 1987 में ही पहली दलित कहानी 'लटकी हुई शर्त' प्रहलादचंद्र दास की छपी ।

दलित कहानी पर विचार करते समय सर्वप्रथम उसकी विषयवस्तु हमें प्रभावित करती है । मध्यवित्तीय वर्ग की अपेक्षा दलित कहानी में अंकित जीवन अपने आप में अलग है । मध्यवित्तीय वर्ग से एकदम भिन्न जीवन के बहुआयामी और विविध दृश्य दलित कहानी में अंकित हुए है । दलितों का शाश्वत दारिद्रय, सर्वभक्षी और अभक्ष्यभक्षी भूख, अस्पृश्यता के कारण आनेवाले असह्य अनुभव आदि समस्त आयामों का सम्यक् अंकन ही दलित कहानी की विशेषता नहीं है परंतु अन्य समाज सापेक्ष जीवन चित्रण के साथ-साथ स्वयं दलित जीवनांतर्गत तनावों और विभिन्न समस्याओं के बोध को प्रकट करने में भी दलित कहानी का महत्वपूर्ण वैशिष्ट्य सन्निहित है । आत्मेत्तर समाज के संदर्भ में अपने समाज का चित्रण करना आत्मदर्पण में अपना ही रूप देखने की अपेक्षा सरल है । स्वयं दलित सामानांतर्गत अंतर्विरोध को साहस के साथ अंकित कर पाने वाली कहानियाँ महत्वपूर्ण सिद्ध हुई है । दलितों के पारिवारीक जीवन के विविध तनाव, पुरानी और नई पीढी और दलित समाज के बीच दिन-ब-दिन बढ़ती जानेवाली दरार आदि का संपूर्ण समझदारी के साथ अंकन दलित कहानियों में होने लगा है । सांस्कृतिक नवजागरण तथा आर्थिक विकास के सीमित अवसरों के कारण निर्मित विविध समस्याओं का अंकन भी दलित कहानी में होने लगा है । नौकरी, व्यवसाय या शिक्षा के निमित गाँव से शहर आकर सफ़ेदपोश बनती जा रही युवा पीढ़ी ने पुरी शहराती बन पाई है और न ग्रामजीवन के आप्त संबंधों से अपने आपको अलग ही कर पाई है । इस युवा पीढ़ी की कतिपय मानसिकता को दलित कहानी अभिव्यक्त कर रही है । इस पीढ़ी के युवकों और युवतियों पर बीतनेवाले मनोवैज्ञानिक संघर्षो को भी दलित कहानी मुखर कर रही है ।

दलित कवियों की तरह दलित कहानीकार भी सामाजिक प्रतिबद्धता के निर्वाह के लिए कटिबद्ध है । इसी कारण उनकी कहानियों में सामाजिक व्यवस्था से उद्‌भूत विकट विषमताओं का चित्रण होता है । इस चित्रण में उन्होंने स्वयं अपने समाज तक को नहीं बख्शा है ।

आज का साहित्य अभिजात्य वर्ग की बलिष्ट भुजाओं का सहारा लेकर चल रहा है । आज न राजा-रानी की कहानी लिखी जाती है और न कोई राजा-रानी कहानी लिखते है । आज न निरंकुश क्षत्रिय अपनी भौंडी शौर्य कथा लिखवाते है या सुनते है और न कोई लिखकर उन्हें सुनाने की गरज रखता है । आज साहित्य की सीमाएँ बदल गयी, रूप बदल गया । आज दलित समाज के चरवाहें, हरवाहे, लकड़हारे, मज़दूर, मज़दूरनी, रिक्शावाले, खोमचेवाले, टमटम-एक्कावाले फल-फूल बेचनेवाले, धान रोपने-बीननेवाली, कुली, रेजा (स्त्री कुली), नौकरानी, मेहतरानी आदि निम्न काम करनेवाले व्यक्ति आज के साहित्य के हीरो और हीरोइन बन गए हैं ।

इन चरित्रों के साथ अपरिहार्यतः इनका पूरा परिवेश, पूरी बस्ती जो और कुछ नहीं पर-झोंपड़पट्टी है जो बारिश में भीगती है, कीचड़ से लथपथ है कभी पानी में तैरती भी है । यहाँ आदमियों के साथ-साथ बारिश के पानी में बहकर आए साँप, चूहे और चिटियाँ एक ही झोपड़ी में आश्रय पाने के लिए लालायित है । हड़कंप जाड़े में ठिठुरनेवाली झोंपड़पट्टी केवल भौगोलिक ही नहीं बल्कि अपनी समस्त सांस्कृतिक विशेषताओं का भी परिचय कराती है । इस प्रकार जिस विलक्षण जीवन का अंकन दलित साहित्यकारों ने अपनी कहानी में किया है उस जीवन का यह अविभाज्य और अपरिहार्य अंग है ।

दलित कहानियों में संगठित होकर गलीज़, बर्बर, परंपरा या जमींदार, पुलिस के जुल्म अथवा अधिकारियों के पक्षपातपूर्ण साजिश भरे रूख सबके खिलाफ लड़ने का संकल्प भी होता है । किन्हीं-किन्हीं कहानियों में तो कहानी के पात्र स्वयं भी दोषी को दंडित करने की क्षमता हांसिल कर लेते है ।

दलित कहानियों में ऐसे प्रयास प्रचुर मात्रा में मिलते हैं । जिसमें प्रायः लोग दलित लेखन पर गाली-गलौज़ का आरोप लगाते हैं । लेखन में गाली के औचित्य को स्वीकारा नहीं जा सकता । लेकिन पात्रों के स्तर, परिस्थिति और वातावरण की यदी मांग हो तो गाली भी अनुचित नहीं होगी । गाली दिये जाने को गलत कहा जा सकता है, लेकिन कथा के प्रसंग में उसकी जरूरत हो तो वह जरूरी भी हो सकती है ।

इस साहित्य को दलित और दलितों की वेदना से जो परिचित है वहीं लिखना है चूँकि वह भुक्तभोगी होता है । यानी वह वंचनाओं, निषेधों, प्रतिबंधों और अवरोधों के बीच जिन्दा रहने का आदि होता है । इसलिए यह वही लिखता है जो यथार्थ की ज़मीन पर खड़ा है, कल्पना के आकाश में नहीं

इसीलिए उसकी भाषा कुलीन भाषा नहीं । इधर कुलीन भाषा इस काबिल ही नहीं है कि दलित की जिन्दगीं के हर पल एक खुरदरेपन को समेट सके । वह अपनी खुरदरी, नुकीली, तीखी और सीधी-सादी भाषा में लिखता है । यद्यपि कुलीन भाषा और उसका साहित्य, मनोरंजन और ऐश्वर्य के माध्यम रहे हैं और अधिकतर यह साहित्य या तो "स्वान्तः सुखाय" लिखा जाता रहा है । अपने सुख के लिए या फिर चाटुकारिता में अपने लाभ के लिए । जबकि दलित साहित्य एक लक्ष्य रखता है । दलित साहित्य मनोरंजनकारी नहीं है बल्कि वह चोट करता है; कचौटता है या फिर शर्मसार करता है । उन्हें जिनके पूर्वजों ने उन पर जुल्म किए थे । इस प्रकार वह मन और सोच बदलने का साधन भी बनता है ।

दलित कहानियाँ सामाजिक बदलाव लाने का आह्वान करती है । इन कहानियों में आक्रोश है, आग है, लावा है, गुस्सा है तो साथ-साथ संवेदना मनवीयता और सब्र भी है । न्याय की उत्कृट लालसा है तो समानता की तीव्र ललक भी है । भाईचारे की भावना है तो उसके साथ आदर पाने की इच्छा भी बलवती है ।

दलित कहानियों के माध्यम से गुलाम समाज को मुक्त कराने, शिक्षित करने, संघर्ष पर उतारने, संगठित करने का सपना साहित्यकार पालता है । खुद नायक बनकर अपने को मानवता के समकक्ष खड़ा करने का मंसूबा पालता है । वह सामाजिक बराबरी ही नहीं आर्थिक बराबरी, पेशा चुनने की स्वतंत्रता, सत्ता में भागीदारी सब चाहता है ।

दलित साहित्य को दो रूपों में देखा जा सकता है - एक तो दलितों के द्वारा दलितों के बारे में लिखा गया साहित्य और दूसरा दलितों के बारे में गैरदलित लेखकों का साहित्य । दलित साहित्य के प्रथम रूप के आधार पर अगर देखें तो हिन्दी के दलित कथाकारों में ओमप्रकाश वाल्मीकि, पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी, मोहनदास नैमिशराय, दयानंद बटोही, रघुनाथ प्यासा, बी.एल.नैय्यर, जयप्रकाश कदर्भ, डॉ. कुसुम वियोगी, बुद्धशरण हंस, रमणिका गुप्ता, लालचंद राही, भागीरथ मेघवाल आदि कहानीकार हैं ।

हिन्दी में दलित कहानी लिखने की विधिवत् शुरुआत करनेवाले हिन्दी कहानीकारों की रचनाओं में जहाँ भी दलित-जीवन की समस्याओं को निरूपित किया गया है, इसका वर्णन करना आवश्यक है । प्रेमचंद, निराला, राहुल, सांकृत्यायन, फणीश्वरनाथ रेणु, रांगेय राघव, शिव प्रसादसिंह, अमृतलाल

नागर, मन्नू भंडारी, भीष्म साहनी, बाबा नागार्जुन, गिरिराज किशोर आदि कहानीकार ने अपना योगदान दिया है ।

(ग) गुजराती कहानी :

प्रस्तावना :

साहित्यिक विघा में अगर कोई विघा है जो छोटे बच्चे और वयोवृद्ध को सुनने और पढ़ने में अत्यंत प्रिय एवं रसप्रद लगती है तो वह है कहानी । इसीलिए कहानी का स्वरूप आज तक अपना स्थान बनाएँ रखने में सफल हुआ है । वर्षान्त में या परंपरा के कारण कितने सामाजिक परिवर्तन होते है, जो साहित्य को भी असर पहुँचाते है तो फिर गुजराती की कहानी (वार्ता) किस प्रकार बाकी रहेगी ।

गुजराती साहित्यिक विधा में कहानी को 'वार्ता' कहा जाता है । जिसको कई नामों से संबोधित किया जाता है । गुजराती साहित्य में टूंकी वार्ता, लघुकथा, नवी वार्ता, छोटी कहानी, अ-वार्ता (अ-कहानी) आदि नामों से उल्लेख किया है ।

कहानी मानव के उद्‌भव के साथ विकसित हुआ साहित्य प्रकार है । वाणी वह साहित्य का उपादान है । चमत्कृतियुक्त वाणी का अर्थ साहित्य । इसी प्रकार कहानी मानवी के बोलचाल और व्यवहार में पली है । ऐसी कहानी प्रारंभ में श्राव्य होगी और बाद में छपने लिखने की प्रथा शुरु होने से वह पाठ्‌य बनी होगी, जो भी हो कहानी मानवी की गति के साथ गतिशील बनी है ।

भारतीय टूंकीवार्ता (छोटी कहानी) के मूल उपनिषदों, जातककथाएँ, पंचतंत्र और हितोपदेश जैसी कथाओं में ढूँढने के प्रयत्न किए है । कोई-कोई मध्यकालीन गुजराती साहित्य रास, फागु, प्रबंध आदि मैं से कहानी का उद्‌भव देखने का भी प्रयत्न करते है । पश्चिम में भी बाईबल में इशु के उपदेश के मूल उसमें ढूँढने का प्रयत्न किया था जो भी हो लेकिन ऐसी पढ़ी हुई या सुनी हुई वार्ता या टूंकी वार्ता नहीं है ।

गुजराती भाषा में अंग्रेजी शब्द 'शोर्ट स्टोरी' Short Story के अनुवाद के रूप में टूंकी वार्ता (छोटी कहानी) शब्द आया है । विश्वसाहित्य में भी टूंकीवार्ता सबसे नवीन साहित्य प्रकार है ।

लाघव लक्ष-एकता और भावसमृद्धि को ध्यान में लेकर कोई टूंकीवार्ता

को उर्मीकाव्य के साथ मिलाते है । तो कोई उसे नवलकथा कहते है । इस प्रकार कहानी के लिए काव्य की तरह व्याख्या करने का संपूर्ण प्रयत्न किया गया है ।

परिभाषा :

(1) Singheness of aim and singheness of effect are therefore the two great canons by which we have to try the value of a short as a piece of art.

(2) A short story must contain one and only one informing idea.

(हडसन)

The Novel is statisfication the short story is a stimulus.

(बेरी)

A story is like a horse-race it is the start and the finish what count most.

(सेजवी)

"जे वीजळीना चमकारानी पेठे एक दृष्टिबिंदु रजू करतां-करतां सोंसरवी नीकळी जाय अने बीजी लपछप विना अंगुनिर्देशन करीने सूतेली लागणीओने जगाड़ी एक काल्पनिक सृष्टि रचे ते टूंकीवार्ता ।"

(धूमकेतु)

"टूंकीवार्ता जीवनना कोई रहस्यने ओछा मां ओछा पात्रोंथी, ओछामां ओछा बनावोथी, ओछामां ओछा शब्दोमां निरूपित करे छे ।"

(रा.वि. पाठक)

"एकज संपूर्ण संस्कार मन पर पाडे ते नवलिका ।"

(विजयराज वैद्य)

"मुख्य सांकळ शोधी काढवानी अने ते मुख्य सांकळने काव्योचित आनंद आपे ते रीते रजू करवानी शक्ति टूंकी वार्ता माटे आवश्यक छे ।"

(रसिकलाल परीख)

"टूंकीवार्ता ऐटले अनुभूति कण । ए अनुभूति मां चमत्कृति होवी जोईए - टूंकीवार्ता छे लेखकनी विशिष्ट भावपरिस्थिति ए कथ्य वृतांतनी मददथी लीधेलो कलाघाट ।"

(उमाशंकर जोशी)

"जीवन साथे निस्बत न धरावती घटनानुं महत्व वार्ता माटे हशे पण टूंकीवार्ता माटे नथी ।"

(रघुवीर चौधरी)

"टूंकीवार्ता कथा छे खरी पण नरी कथा नथी । ऐतो रस केवळ कथा मां रह्यो नथी । स्थूल स्वरूपना कुतूहल जगाडवाना उपायोंने चमत्कृतिनां जोरे वार्ता जीवी सके नहिं ।"

(सुरेश जोशी)

टूंकीवार्ता के स्वरूप को समजने के लिए कई साहित्यिक विचारकों के द्वारा व्याख्यायित करने का प्रयत्न किया है लेकिन वह केवल अंगुलीनिर्देश ही है । इस स्वरूप को स्पष्ट रूप से देखा जाए तो पांच घटक तत्वों में देखा गया है । वस्तु, घटना, पात्र, वर्णन और संवाद । यह पांचों घटक के द्वारा टूंकीवार्ता के स्वरूप को समज़ने में आसानी होगी और इसी पांच घटक की सहायता से ही सर्जक अपनी अनुभूति को सरलता से व्यक्त कर सकेगें ।

गुजराती कहानी के विभिन्न रूप :

हिन्दी कहानियों के रूप निर्माण और विकासक्रम में विभिन्न छोटे-बड़े आंदोलनों की भूमिका तगड़ी रही है । किंतु गुजराती साहित्य में विभिन्न आंदोलनों की कमी के कारण गुजराती कहानियों में विभिन्न सोपानों और रूपों की बहुलता या अनेकरूपता का प्राय: अभाव सा है । फिर भी वह अपने पड़ोशी प्रदेशों की भगिनी भाषाओं के विभिन्न साहित्यिक आंदोलनों से कमोवेश प्रभावित तो होती ही रही है ।

❑ नवी वार्ता :

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी को जिस प्रकार नयी कहानी के नाम से जाना जाता है, उसी भाँति गुजराती कहानी को 'नवी वार्ता' अर्थात् 'नई कहानी' के नाम से पहचाना जाता है । हालांकि गुजराती में उसके लिए 'टूंकीवार्ता' अर्थात् 'छोटी कहानी' अभिधान रूढ़ सा हो गया है । सन् 1955 के बाद की छोटी कहानी अपनी नयी पात्रभूमि या अंतस्तत्व की वजह से आधुनिक और रूपरचना या आकृति की दृष्टि से 'प्रयोगशील' कहलाती है ।

सच बात तो यह है कि छोटी कहानी की अपनी अलग विशेषता होती है जो पाठक के मन, हृदय, मस्तिष्क पर अपना प्रभाव बनाये रखती है और इसीलिए ऐसी कहानी चिरंजीव होती है । उसे कल की आज की पिछली पीढ़ी की नूतन, प्राचीन, आधुनिक जैसे लेबल लगाने की जरूरत रखने में महत्वपूर्ण

होते है । फिर भी इस समय नूतन, नवीन, नेव्य, नयी जैसे शब्द प्रयोग में लाये जाते रहे हैं । इसलिए गुजराती कहानी पर भी 'नयी' शब्द सार्थक है ।[9]

गुजराती कहानीकारों के अनुसार - 'आधुनिक' केवल विशेषण नहीं, पारिभाषिक शब्द है, जो किसी कालखण्ड या स्थल के लिए प्रयुक्त होकर किसी विचारधारा का प्रवर्तन करता है । जबकि कहानीकारों के अनुसार - 'नया' शब्द किसी भी युग, समय और स्थान का प्रतिनिधित्व करता है । 'नया' शब्द न विशेषण है न संज्ञा वह मात्र उस प्रक्रिया का घोतक है जो सतत प्रवहमान है ।

❑ लघुकथा :

हिन्दी के भांति गुजराती कहानी में भी लघुकथा और व्यंग्यकथा के रूपों का विकास हो रहा है । लघुकथा में नवलिका के सभी लक्षणों के होते हुए भी लाघव का विशिष्ट गुण होता है जबकि कटाक्ष कथा का प्राण कटाक्ष तत्व होता है । इसी प्राण तत्व के कारण वह अन्य से अपनी अलगता साबित कर पाती है । गुजराती लघुकथा में मोहनलाल पटेल विशेष उल्लेखनीय है और लघु व्यंग्य कथा के लिए विनोद भट्ट । विनोद भट्ट की व्यंग्य कथाओं की विशेषता ये है कि व्यंग्य का अंत हो जाने पर भी उसके ध्वनि तरंग नए परिणाम में विस्तरित होते रहते हैं ।

❑ अ-वार्ता :

गुजराती कहानी के घटना लोपवाद पर अमरीका के (Anti-Story) आंदोलन का प्रभाव है । इन रचनाओं में नकारात्मकता और अस्वीकार है । इसलिए इसे अ-वार्ता (अ-कहानी) के नाम से भी पहचाना जाता है । कथाकारों ने घटना का विलोपन करने का प्रयत्न किया है । इन्होंने आकार का नियंत्रण और सामाजिक जिम्मेदारियों की बेडियाँ तोड़ दी है । जिसमें हमें छोटी सार्थक रचनाएँ मिलने लगीं । जिसमें व्यक्ति, जीवन और संवेदन सब कुछ स्वाभाविक रूप से निरूपित होने लगा । इसमें अलंकृत मानव नहीं, न ही विशिष्टता, न ही असामान्यता की इच्छा और न ही कोई हठाग्रह । गुजराती में इस प्रकार की कहानियों का एक विशिष्ट वर्ग है जो ज्यादा से ज्यादा पुष्ट होता रहा है ।

❑ छोटी कहानी :

सन् 1955 के बाद भंजनात्मक, ह्रास्यात्मक, प्रतिक्रियात्मक तत्वों

विचारों के प्रति अभिमुख होना कहानीकारों में दिखता है । पिछले पच्चीस वर्षो के बीच गुजराती की छोटी कहानी में सैचित नूतन अभिगमों ने हमें उस दिशा में सोचने के लिए मजबूर किया है । उसके तरंगित जाल में प्रतिबिंबित चेहरा पहचाना जा सके, इतनी अभिनव विभावना और विलक्षण प्रयोग दिखानेवाला विशिष्ट व्यक्तित्व उसने विकसित किया है । जीवन और जगत के अनेक क्षेत्रों में होनेवाले परिवर्तन जिस तरह सर्जक की अनुभूति और अभिव्यक्ति को बनाते हैं, घाट देते है उसी तरह सिद्धहस्त सर्जक की कलादृष्टि में आनेवाले परिवर्तन भी, किसी भी कला की नई पीढ़ी का सर्जन करते है ।[10]

आधुनिक छोटी कहानी नई जटिलताओं, विषमताओं आदि में फँसे नवमानव-मन को वाचा देती है क्या ? आज की कहानी में जीवन की शीर्ण-विशीर्णता, संघर्ष और संहारकता, वैज्ञानिक प्रभाव, आंतरिक मनोदर्शन और चेतना का चित्रण हुआ है । उसने अपना स्वरूप चाहे विदेश से उधार लिया हो, पर जो उपज है वह तो अपनी भूमि पर ही हो रही है ।[11]

छोटी कहानी में घुटन का चिंतन, एकांगी, एक देशी या संकुचित नहीं है, परंतु विशाल और समष्टिगत है । वे दिवास्वप्न, अवचेतन या अर्धचेतन मन विज्ञान और मनोविज्ञान के संकेतरूप, मनोविकृतियाँ, दमन, प्रतीक या रूपकों का प्रयोजन कर व्यक्तिगत अनुभूति का आलेखन करती है । वह मात्र यथार्थ को लेती है बिना किसी आलोचना के । फिर भी दुर्बोधता, प्रतीकात्मकता की वजह से उसका भावात्मक पक्ष उभर नहीं पाता है ।

कहानीकार छोटी कहानी का दास नहीं, शिष्य नहीं, मित्र है । इसलिए छोटी कहानी की स्वरूपगत अनिवार्यता व्यापक मर्यादाओं में रहकर वह कलाकृति का सर्जन करता है । दूसरी तरह से कहें तो छोटी कहानी नए संदर्भो की खोज है । आज की कहानी में प्रबलतम व्याकुलता देखने को मिलती है । आज का कहानीकार व्यवहारिकता और वास्तविकता को अच्छी तरह समझ रहा है ।

(घ) गुजराती दलित कहानी का प्रारंभ एवं विकासयात्रा :

किसी भी भाषा का साहित्य उसकी सांस्कृतिक और राष्ट्रीय परिवर्तनों को तादृशित करने के लिए प्रयत्नशील होता है । गुजराती साहित्य में भी बीसवीं सदी के साथ अनेक परिवर्तन आते गए है । श्री गोवर्धनराम त्रिपाठी द्वारा रचित उपन्यास 'सरस्वतीचंद्र भाग-4' और श्री मलयानिल की छोटी कहानी 'गोवालणी' तक के कथासाहित्य में अनेक उतार-चढ़ाव आते रहे है ।

काव्य का बलिष्ट हस्ताक्षरों से हंमेशा विकास होता रहा है । मध्यमकालीन, अर्वाचीन, आधुनिक युग के साहित्य की गतिविधि को देखे तो एक बात बलपूर्वक कहे तो ऐसा है कि मुख्यतः गुजराती साहित्य स्वरूप भले ही पश्चिमी साहित्य की देन हो लेकिन अब वह राष्ट्रीयस्तर और विश्वस्तर पर अपनी पहचान छोड़ चुका है । अर्वाचीन साहित्य के साथ आधुनिक साहित्य को निखारने का काम पूर जोश में हो रहा था तब गुजराती साहित्य में दलितधारा का प्रवेश आकस्मिक और अवर्णनीय लगता है । कोई भी साहित्यस्वरूप का रूख़ बदलना रातो-रात नहीं हो सकता । गुजराती साहित्य में दलित साहित्य के प्रवाह के बहने का अर्थ है कोई निश्चित दृष्टि से देखना ।

मराठी दलित साहित्य का प्रारंभ हो चुका था । मराठी दलित साहित्य की विचारधारा डॉ. बाबासाहेब आंबेड़कर और ज्योतिबा फूले के आंदोलन के द्वारा प्रवेश होना माना जाता है । गुजराती साहित्य की सोच मराठी दलित साहित्य से विकसित हुई है यह स्वीकार्य है लेकिन गुजराती दलित साहित्य को डॉ. बाबासाहेब जैसे युगपुरूष की प्रेरणा का लाभ प्राप्त नहीं हुआ है । एक बात का स्वीकार करना पड़ेगा कि गांधीविचारधारा का असर ललित साहित्य की तरह ही गुजराती दलित साहित्य को मुख्य रूप से प्रभावित कर सके है । स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी गुजरात में गांधीजी का प्रभाव कई सालों तक रहा लेकिन कई पर गांधी विचारधारा दलितों की विकासगति/उन्नति को दबोचती हुई लगी ऐसा माना जाता है । उसकी स्पष्टता देते हुए कहते है कि दलितों के जीवन में उपस्थित हुए प्रश्न जैसे कि अस्पृश्यता, असमानता, शोषण, व्यथा-पीड़ा, गरीबी अभी तक अपना स्थान जमाए हुए है ।

1975 के बाद दलितों पर अत्याचार बढ़ते रहे और ऐसे कृत्य भी होते रहे जिसमें आम आदमी के हृदय को द्रवीत कर दें । उसके थोड़ें ही वर्षो में 1981 में अनामत आंदोलन का शंखनाद हुआ । दलितवर्ग जागृत और सभान होकर सोचने पर मज़बूर हो गया । सामाजिक, सांस्कृतिक, राजकीय परिवेशों में हलचल मच गई । दलित हिन्दू होने के बावजूद उनकी अवगणना आत्मसम्मान को लगनेवाले ठेस से कुछ करने की तमन्ना प्रकट हुई और उसके परिणाम स्वरूप गुजरात के राजतंत्र पर होनेवाले सुभग परिणाम हम देख़ सकते है । ऐसी जागृति और सभानता का प्रवेश साहित्य में होता हुआ हम 1975 के आसपास लिखें हुए काव्य से 1981 के बाद की रचनाओं में शुद्ध दलित कविता का जन्म हुआ नज़र आता है । इस कविता का मुख्य सूर अस्पृश्यता, शोषण, अन्यायों के सामने आक्रोश, विद्रोह व्यक्त करना है । ललित काव्य से

भिन्न दलित काव्य के अलग लक्षणों के साथ संवेदना को स्पर्शने में प्रयत्नशीलता मिलती है । 1980-85 के समय में गुजराती साहित्य में काव्य, कहानी, उपन्यास, रेखाचित्र, नाटक, आत्मकथा, संस्मरण अनेक विधा के द्वारा गुजराती साहित्य में दलित साहित्य का जन्म हुआ ।

1975 के निकट में हमारे यहाँ दलित साहित्य के जन्म पूर्व भी शोषित प्रजा की समस्याओं का अंकन होता रहा था लेकिन उस समय इस प्रकार के साहित्य के आगे 'दलित' ऐसी कोई संज्ञा का प्रयोग नहीं हुआ था, इसीलिए कई विद्वान 'दलित साहित्य' को नहीं मानते ।

बीसवीं सदी के गुजराती दलित साहित्य की शुरुआत काव्य के द्वारा हुई । उस समय के सामयिक 'पेन्थर, आक्रोश और काळो सूरज' में बार-बार काव्य प्रकट होते रहें । सामाजिक वर्णव्यवस्था और हत्याकांड को समाज के सामने लाने के लिए पत्रिकाओं का बड़ा योगदान रहा और इससे प्रेरित होकर साहित्यकारों ने कहानी और उपन्यास के दौर को आगे चलाया ।

काव्य और उपन्यास से अधिक कहानी में शोषित-पीड़ित समाज की समस्याओं को अधिक स्पष्टता से देख सकते है । 1918 में गुजराती साहित्य की प्रथम कहानी 'गोवालणी' प्रकट हुई उसके बाद दो महान कहानीकार धूमकेतु और रा.वि.पाठक की कहानियों में शोषणयुक्त समाज का निरूपण दिखाई देता है । रा.वि.पाठक ने 'खेमी' जैसी विशिष्ट कहानी देकर नई राह दिखाई है । धूमकेतु ने 'लखमी' जैसी अनेक कहानियों में निम्नवर्ग के पात्रों की समस्या का निरूपण किया है । उमाशंकर जोशी, सुंदरम्, ईश्वर पेटलीकर, पन्नालाल पटेल, चुनीलाल मड़िया, बकुलेश, जयंत खत्री, जयंती दलाल जैसे कहानीकारों की कहानी में किसी न किसी प्रकार से निम्नवर्ग की पीड़ा-वेदना को आलेखन करने का प्रयत्न किया गया है ।

गुजराती दलित कहानी ने हमें हिन्दी दलित साहित्य की तरह दो लेखकवृंद कार्यशील मिलते है । एक तो जो जन्म से दलित है और जो जन्म से दलित नहीं है ऐसे कहानीकार प्राप्त हुए है । अदलित कहानीकारों में धूमकेतु, रा.वि.पाठक, उमाशंकर जोशी, सुंदरम्, ईश्वर पेटलीकर, पन्नालाल पटेल, चुनीलाल मडिया, बकुलेश, जयंत खत्री, जयंती दलाल, माय डियर जयु, रामचंद्र पटेल, मफत ओझा, योगेश जोशी, नासीर, मन्सूरी, अनिल व्यास, रमेश र. दवे, हर्षद त्रिवेदी, विष्णु पंडया, रजनीकुमार पंडया, सुमंत रावल, धीरज ब्रह्मभट्ट आदि । दलित कहानीकार में दलपत चौहान, हरीश मंगलम्, जोसेफ

मेकवान, भी.न.वणकर, पथिक परमार, यशवंत वाघेला, मोहन परमार, राघवजी ०माधड़, अनिल वाघेला, मंगल राठोड, नरसिंह उजंबा, दशरथ परमार, अरविंद वेगड़ा, नेकल गांगेरा, चंद्राबहन श्रीमाळी, बी.केशरशिवम् आदि ।

गुजराती दलित कहानी आज जिस प्रकार से लिखी जाती है उसे देखकर तो इतना कह सकते है कि अब गुजराती साहित्य में अपना स्थान जमाने के लिए प्रयत्नशील बन रही है । 1987 में 'गुजराती दलित वार्ता' के संपादन के बाद गुजराती साहित्य में दलित कहानी का प्रवेश अनन्य और अमूल्य है । सामाजिक मूल्यों को प्रस्थापित करने उसके गोपित अंशों को प्रकाश में लाने का काम दलित कहानी ने किया है । दलित समाज के रीतरिवाज़, तौर-तरीके और आशा अरमान का एक अलग विश्व है । इस विश्व का सर्जन करके भी दलित कहानी अन्यायों के सामने आक्रोश और विद्रोह के सूक्ष्म स्वरूप प्रकट करती है । इस प्रकार गुजराती दलित कहानी अलग-अलग दिशा में विस्तरीत हुई है ।

गुजराती भाषा में छोटी कहानी (टूंकीवार्ता) तो बीसवीं सदीं में आई 'मलयानिल' स्व. कंचनलाल वासुदेव मेहता (ई.स.1892-1919) की 'गोवालणी' को कहानी के नए स्वरूप को पहला रूप माना जाता है । किशनसिंह चावडा द्वारा ई.स.1918 में 'बीसवीं सदीं' मासिक में प्रकट हुई थी । पश्चिम के नए कहानीकारों में गोगोल के 'ओवरकोट' में से एवम् गुजराती कहानीकार मलयानिल की 'गोवालणी' में से उपस्थित हुए है । गुजराती छोटी कहानी के एक स्वतंत्र कलास्वरूप के रूप में 'गोवालणी' ने अपना स्थान स्थापित किया है । आज हम छोटी कहानी के एक स्वतंत्र रूप देखते है तो उसे सँवारने का यश धूमकेतु को मिलता है । धूमकेतु और द्विरेफ ने समाज के दीन-दलित जीवन को अपने कहानी का विषय बनाया है । उसी प्रकार उमाशंकर जोशी, पन्नालाल पटेल, सुंदरम् आदि लेखकों ने निम्नवर्ग का आलेखन किया है ।

अर्वाचीन गुजराती छोटी कहानी का स्वरूप विकसित होता रहा था लेकिन नवें दशक के प्रारंभ में ही छोटी कहानी के सर्जनक्षेत्र में रूकावट और जड़ता स्थापित करने की शिकायत है और अनेक प्रश्न उपस्थित होते है जैसे छोटी कहानी फिर से पुरानें ख्यालों की होती रही है ? कहानी कहानी नहीं रही ? कहानी सामाजिक संदर्भ खो रही है । इस प्रकार सर्जक और भावक के बीच संक्रमण के अभाव स्थापित हुआ । ऐसे तंग समय में गुजराती साहित्य में दलित-कहानी का उद्‌भव एक चुनौती है ।

दलित कहानी की सच्ची पहचान तो 'गुजराती दलित वार्ता' (संपादन मोहन परमार और हरीश मंगलम्) से गुजराती साहित्य को हुई है । इस संग्रह में प्रकट हुई कहानियाँ अनेक विवेचकों के अलग-अलग कारणों से पसंदगी प्राप्त की है। इसलिए इस संग्रह को अपूर्व आवकार प्राप्त हुआ है । इस संग्रह की विशेषता है कि उसमें पंद्रह कहानीकारों की कहानी पंद्रह विवेचकों ने जांची है अन्यथा उसके सिवा अलग-अलग सामयिकों में हुई उसकी विवेचना को और रसप्रद बना देती है । दलित कहानी लेखन का आरंभ हुआ तब डॉ. सुरेश जोशी के पूर्ण प्रभाव में रूपवादी कहानी गुजराती परिदृश्य पर हावी थी । ऐसे में जीवन के प्रति लौटने की कुछ महत्वपूर्ण पहल में दलित चेतना भी महत्वपूर्ण कारण बनी हुई है । लोक ग्रामीण बोलियाँ, ग्रामीण विषयों के विनियोग से दलित कहानी ने गुजराती को कुछ विशेष शब्दावली भी दी है । फिर भी जो चित्र बन रहा है वह ऐसा है कि जिन चार रचनाकारों की सक्रिय सृजनशीलता के बावजूद दलित चेतना अभी पूरी तरह विकसित नहीं हो पा रही है । इसके पीछे शायद कुछ कारण भी रहे होगें । जैसे कि कहानियों में मार्क्सवाद प्रभावशाली ताकत बनकर उभरता है । उनकी कहानियाँ ज्यादातर 'अंधेरीगली, फूटपाठ एवं मजूरचाल' में दलित स्वर मुखरित है । गुजराती कहानी के भीष्मपिता कहे जानेवाले पन्नालाल पटेल के अधिकांश चरित्र निम्न वर्ग से ही आए है ।

कुल मिलाकर स्थिति यह है कि तथाकथित 'दलित कहानी' को कलात्मक रूप में भी पूर्व कहानी को छूना है - दलित समस्या से जूड़े कुछ साहित्यिक सवाल नीचे रेखांकित हैं ।

(1) दलित मनुष्य की पहचान की स्पष्ट छवि जिस रचना से उभर रही है वह दलित रचना है ।

(2) कला निर्मित को परे हटाकर समाज के प्रति प्रतिबद्धता दलित साहित्य का बड़ा योगदान है ।

(3) दलित रचनाकार को प्रचारात्मकता की चिकनी जमीं से सतर्क रहना चाहिए ।

(4) साहित्य में रूपांतरित न हुई हो, ऐसी दलित चेतना को 'दलित साहित्य' बताना उचित नहीं होगा ।

(5) यह धारणा भी बदलनी चाहिए की । दलित साहित्य केवल दलित रचनाकार द्वारा ही लिखा जा सकता है और यह दलितों के लिए ही है ।

दलित साहित्य चाहता है समानता एवं संवादिता । उसका तेजस्वी पहलू यह है कि दलित सतर्कता एवं दलित पहचान के उपरांत दूसरे मानवीय मूल्यों के संदर्भ में भी उसका सृजन होता है ।

दलित कहानी की पहचान को स्पष्ट करने के लिए उसकी विभावना इंगित करनेवाले कुछ लक्षण निम्नलिखित है -

1. दलित परिवेश
2. वर्ण्य विषयवस्तु द्वारा दलित वर्ग की मुख्यतः समस्याओं का निरूपण ।
3. दलित चरित्रों की भाषा एवं व्यवहार ।
4. दलित संवेदना और समग्र कृति का अर्थसंदर्भ ।

इस प्रकार इन चार लक्षणों के द्वारा दलित कहानी की विभावना स्पष्ट हो पाएगीं ।

हिन्दी दलित साहित्य की तुलना में गुजराती दलित साहित्य में अधिक उपन्यास मिलते है । उनकी कहानियाँ जहाँ पेशगत जड़ता, दलितों की जातिय जन्म आधारित मान्यताएँ, छूआछूत जैसी त्रासदी को उभारती हैं, वहीं वे उनकी बेरोज़गारी, भूमिहीनता, घर विहीनता होने के संकट अथवा उनके भीतर के अपने भेदभाव, कमजोरियाँ, अंधविश्वासों पर भी विवेचना करती है । गुजराती दलित साहित्य के कई साहित्यकार वस्तु के साथ-साथ कला-पक्ष पर भी जोर देते है । 'नया मार्ग' में जयंत गाड़ित ने तो 'गुजराती दलित वार्ता' पर चर्चा करते हुए दलित लेखकों को आक्रोश और हमले से बचने की सलाह भी दी है । मोहन परमार के अनुसार भी केन्द्र में मात्र दलित वस्तु होने से ही किसी रचना को कहानी सिद्ध नहीं किया जा सकता, उसके लिए कहानी को कहानी की लाक्षणिकताओं पर ध्यान देना जरूरी है । जब तक कहानी दलित चेतना का सृजन नहीं करेंगी तब तक वह कहानी दलित कहानी नहीं होगीं ।

गुजराती दलित कहानी के पात्र महिला हों या पुरुष सामाजिक पर्वो पर उच्च वर्ग को खुश करने के लिए भी नाचते है । ये मध्यम वर्ग की तरह कुंठित नहीं है जीवट है । दलित कहानी के पात्र किसान, कारीगर, मज़दूर, निम्न जाति के ही पात्रों का वर्णन किया गया है ।

एक बात तो यह है कि चाहे किसी भी भाषा का दलित साहित्य हो वह लेखक या उसके समाज का भोगा हुआ सच है । साहित्य में 'वस्तु' अपना एक स्थान रखती है । कला उस वस्तु को सँवारने, मनोरंजक बनाने के लिए होती है न कि स्वयं वस्तु का स्थान ले लेने के लिए । कला चमत्कृत कर सकती है किंतु यह वस्तु ही है जो दशा और दिशा का संचालन करती है

और दृष्टिकोण निर्माण करने में सहायक होती है । गुजराती दलित साहित्यकार ने कलावाद के मिथक की परंपरा को सबसे पहले कविता में तोड़ा । गुजराती दलित साहित्यकार भी वस्तु को प्रधान मानता है जो प्रामाणिक होती है । दलित लेखक अपनी देशज तथा बोली जानेवाली भाषा एवं अपने मिथकों या प्रतीकों से जो उसके अपने समाज के है उसे सँवारता है या वह मिथक के द्वारा अपनी कृति को सजाता है । उसके प्रतीक रोजमर्रा के प्रतीक हैं । चाहें वे मैला साफ़ करनेवाली खपची हो, झाड़ू, टोकरी या कपड़ा बुननेवाला करधा हो अथवा उसके अन्य औज़ार हों, इनके माध्यम से वह अपनी भावनाओं को गूंथता है । कला के लिए कला का इस्तेमाल करके वह वस्तु को विकृत नहीं करता । दलित पात्रों की ओर दृष्टि करें तो हमें उनके व्यवसाय के आधार पर ही उनकी मानसिकता व्यवहार और संघर्ष का पता चलेगा । गुजराती कहानी 'सोमली' नायिका शराब का धंधा करती है । दायण - इस कहानी में विधवा दलित स्त्री बेनीमा उच्चवर्ण के लोगों की मदद करती है । दाई का काम करके केवल अपने हुन्नर से मातृत्व का पद दिलाने में मददगार बनती है बदले में मीठे बोल चाहती है पर उच्चवर्ण उसके हाथ में जन्मता लेते है पर जैसे जातिग विशेषता हो उस प्रकार से धुत्कार के अहसान फरमोश बनते है । इस कटुसत्य से वेनीमा की अंतरव्यथा भी प्रकट होती है । आघात - कहानी का पात्र पसो और जेठो भी मरे हुए पशु के मांस को बेचकर अपनी पेट की आग को बुझाते है । 'उधाडा पग' का धनो एक ऑफिस में चपरासी की नौकरी करता है । 'धंधा' का नायक मज़दूर है । इस प्रकार सभी कहानी के पात्र निम्न है और निम्न काम ही करते दिखाई देते है । इन पात्रों में खुद शोषण का शिकार बने है और मज़बूरन उन्हें इस व्यवसाय से जोड़ा हुआ दिखाया है ।

गुजराती दलित कहानी में अलग-अलग परिवेश की बोलियों का प्रयोजन दिखाई देता है । इसलिए इस कहानी के जीवंत होने का आभास करती है । उसमें महेसाणवीं, सुरती, सौराष्ट्र के ग्राम्य विस्तार की जनपदी बोली का उपयोग हुआ है । इस प्रकार सभी बोलियों की विविधता के कारण कहानी के संवाद वास्तवदर्शी और जीवंत नज़र आते है ।

इस प्रकार कहानी कला के आधार पर गुजराती दलित कहानी सशक्त एवं सफलता के सभी आयामों को पार कर चुकी है । इसलिए यह आज से गुजराती संवेदना का यह एक महत्वपूर्ण अंश है । इस सर्जनात्मक आविष्कारों को आत्मसात् करने के लिए भावकचेतना के लिए अनिवार्य है उसमें समतापूर्ण समाजरचना का संप्रेरक निहित है ।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. मंच - 1973 स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी समीक्षा : मूल्यांकन विशेषांक - पृ.167-168
2. सचेतना, 4 दिसंबर 1967, पृ.64
3. डॉ. महिपसिंह सचेतना-4, दिसंबर, 1967, पृ.62
4. डॉ. महिपसिंह सचेतना-4, दिसंबर, 1967, पृ.72
5. समकालीन हिन्दी कहानी, ले.वेदप्रकाश अमिताभ, दिनेश पालीवाल, पृ.27
6. समकालीन कहानी : समांतर कहानी, पृ.63
7. प्रेमचंद का कथासंसार, डॉ. शैलेश जैदी, संपादक - बादातसिंह राबत, पृ.73
8. सारिका, जुलाई-1973, पृ.8
9. अर्वाचीन गुजराती साहित्यनी विकासरेखा, लेखक-धीरुभाई ठाकर, पृ.546
10. अर्वाचीन गुजराती टूंकी वार्ता : नवीन मोदी, पृ.193
11. अर्वाचीन गुजराती टूंकी वार्ता, नवीन मोदी, पृ.199

Chapter. 4

Smt. Hansa Mehta Library, The M. S. University of Baroda

चतुर्थ अध्याय

हिन्दी-गुजराती दलित कहानियों का तुलनात्मक अध्ययन